भाषाओं के साथ ख़त्म हो रही है जैव विविधता

संजय कुंदन

भाषा और जैव विविधता में गहरा संबंध है। यह बात ऊपरी तौर पर थोड़ी अजीब सी लग सकती है, पर सच है। वही इलाक़े भाषाओं के मामले में समृद्ध हैं, जहाँ जैव विविधता भरपूर है। जब भाषा पर खतरा मंडराता है तो जैव विविधता भी ख़तरे में पड़ जाती है और जब भाषा समृद्ध होती है, जैव विविधता भी संपन्न होती है। ये एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। असल में भाषाओं में कई विशिष्ट ज्ञान निहित होता है, जिनके एक बड़े हिस्से का स्वरूप एकदम स्थानीय होता है। तो भाषा के मरने के साथ वह ज्ञान भी ख़त्म हो जाता है। उस ज्ञान के ज़रिए जैव विविधता का जो संरक्षण हो रहा होता है, उस पर विराम लग जाता है।

इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। हवाई द्वीप में हरे समुद्री कछुए (होनू) पाए जाते हैं, जिन्हें शुभ माना जाता है। एक समय स्थानीय भाषा पर गहराते संकट के साथ इन कछुओं की आबादी काफ़ी सीमित हो गई। दरअसल, स्कूलों में स्थानीय भाषा पर रोक लगाने के बाद, उसे बोलने वाले कम होने लगे थे। 1980 के दशक में स्कूल में भाषा पर लगी यह पाबंदी हटा दी गई तो होनू की आबादी भी अप्रत्याशित रूप से बढ़ने लगी। अनुमान है कि भाषा के संवर्द्धन के साथ पिछले 25 सालों में इस कछुए की आबादी में 53 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

स्थानीय समुदाय पारिस्थितिकी के बारे में अपने ज्ञान को दर्ज करने के लिए स्थानीय भाषाओं का उपयोग करते हैं मसलन कौन से पौधे विषैले हैं, कौन से मर रहे हैं, कौन से मूल्यवान हैं। शब्दों और वाक्यांशों का पौधों, जंगल, पानी, जानवरों और भूमि के साथ एक तरह का संबंध बन जाता है। स्थानीय समुदाय प्राकृतिक तत्वों का उपयोग करते रहे हैं, जैसे कि पौधों के लेटेक्स का उपयोग शायद फंगल संक्रमण के इलाज के लिए होता आया है और पेड़ों की छाल का उपयोग पाचन संबंधी समस्याओं के समाधान के लिए। श्वसन संबंधी बीमारियों के लिए फलों का इस्तेमाल होता रहा है। शोध से पता चला है भारत में आदिवासी समूह बीमारियों से लड़ने के लिए औषधीय पौधों का उपयोग करते आए हैं। प्राचीन भारतीय लगभग 3,000 साल पहले मानसिक विकारों से लेकर अनिद्रा और साँप के काटने तक कई बीमारियों के इलाज के लिए सर्पगंधा (राउवोल्फिया सर्पेन्टिना) के पौधे का उपयोग करते थे और दर्द तथा चिंता से राहत के लिए खसखस (पापावर सोम्निफेरम) का।

पेड़ और मोर, 2015, बऊवा देवी

यह संयोग नहीं है कि दुनिया की अधिकांश भाषाएँ जैव विविधता की प्रचुरता वाले इलाक़ों में ही फलती-फूलती रही हैं। धरती के कुल क्षेत्रफल के महज 7 प्रतिशत हिस्सेदारी वाले ऊष्णकटिबंधीय क्षेत्र में सबसे अधिक जीवों की प्रजातियाँ पाई जाती हैं। ये क्षेत्र सांस्कृतिक विविधताओं से भी भरे हैं। यहाँ दुनिया की अधिकांश जनजातियाँ और प्रजातियाँ एक साथ निवास करती हैं। आमतौर पर ये क्षेत्र आर्थिक रूप से संपन्न नहीं हैं और यहाँ जनसंख्या का घनत्व अधिक नहीं है।

यह वाक़ई चिंता का विषय है कि पिछले कुछ दशकों से भाषाएँ लगातार मर रही हैं। ज़ाहिर है इससे जैव विविधता पर भी बड़ा संकट पैदा होता जा रहा है। यह एक ऐसा संकट है, जिस पर आमतौर पर हमारा ध्यान नहीं जाता क्योंकि दुनिया की प्राथमिकता में अन्य कई समस्याएँ ऊपर हैं। 1950 और 2010 के बीच लगभग 230 भाषाएँ लुप्त हो गईं और सदी के अंत तक दुनिया की 50 फ़ीसदी से ज़्यादा भाषाएँ विलुप्त हो सकती हैं। यूनेस्को के अनुसार, हर 14 दिन में एक भाषा मर जाती है। स्वदेशी भाषाओं को संरक्षित करने के एक गंभीर प्रयास में, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 2022-32 को स्वदेशी भाषाओं का अंतरराष्ट्रीय दशक घोषित किया है।

आमतौर पर एक भाषा तब मर जाती है जब उसे बोलने वाला कोई नहीं बचता। इसलिए किसी भाषा को विलुप्त होने से बचाने के लिए उसके बोलने वालों की संख्या को बनाए रखना या बढ़ाना बेहद ज़रूरी है, लेकिन दुनिया की 50% से ज़्यादा भाषाओं को बोलने वालों की संख्या 10,000 या उससे भी कम है। सैकड़ों भाषाओं को बोलने वालों की संख्या एक दर्जन से भी कम है।

भाषाएँ आमतौर पर पीढ़ियों के दौरान धीरे-धीरे विलुप्त होती हैं। कभी-कभी, अगर बोलने वालों की संख्या तेज़ी से घटती है, तो भाषा बहुत जल्दी विलुप्त हो जाती है। प्राकृतिक आपदा या बीमारी के हालात में ऐसा होता है। धीमी मौत आमतौर पर तब होती है जब बोलने वाले दूसरी भाषा सीखते हैं और द्विभाषी बन जाते हैं। यह दूसरी भाषा प्रायः अपने देश में प्रचलित भाषा होती है। समय के साथ, आने वाली पीढ़ियाँ अपनी मातृभाषा से संपर्क खो देती हैं और एक भाषा लुप्त हो जाती है। घुमंतू समुदाय और तटवर्ती क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की भाषा सबसे अधिक ख़तरे में हैं।

दूसरी भाषा अपनाने के पीछे कई कारक काम करते हैं जैसे उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद, पूंजीवाद, वैश्वीकरण, राजनीतिक दमन, बीमारी और यहाँ तक कि तकनीकी विकास भी। जब छोटे समुदाय अपनी भाषाओं को छोड़कर मुख्यधारा के संस्करणों को अपनाते हैं, तो औषधीय पौधों, खाद्यान्नों की खेती, सिंचाई की तकनीकों, नौवहन प्रणालियों, मौसमी कैलेंडरों के बारे में पारंपरिक ज्ञान नई पीढ़ी तक नहीं पहुँच पाता या इसके पहुँचने में समस्या आने लगती है। एक हालिया रिपोर्ट से पता चला है कि भाषाई विविधता के ह्रास से सदियों पुराने उपचार के तरीक़े लुप्त हो सकते हैं।

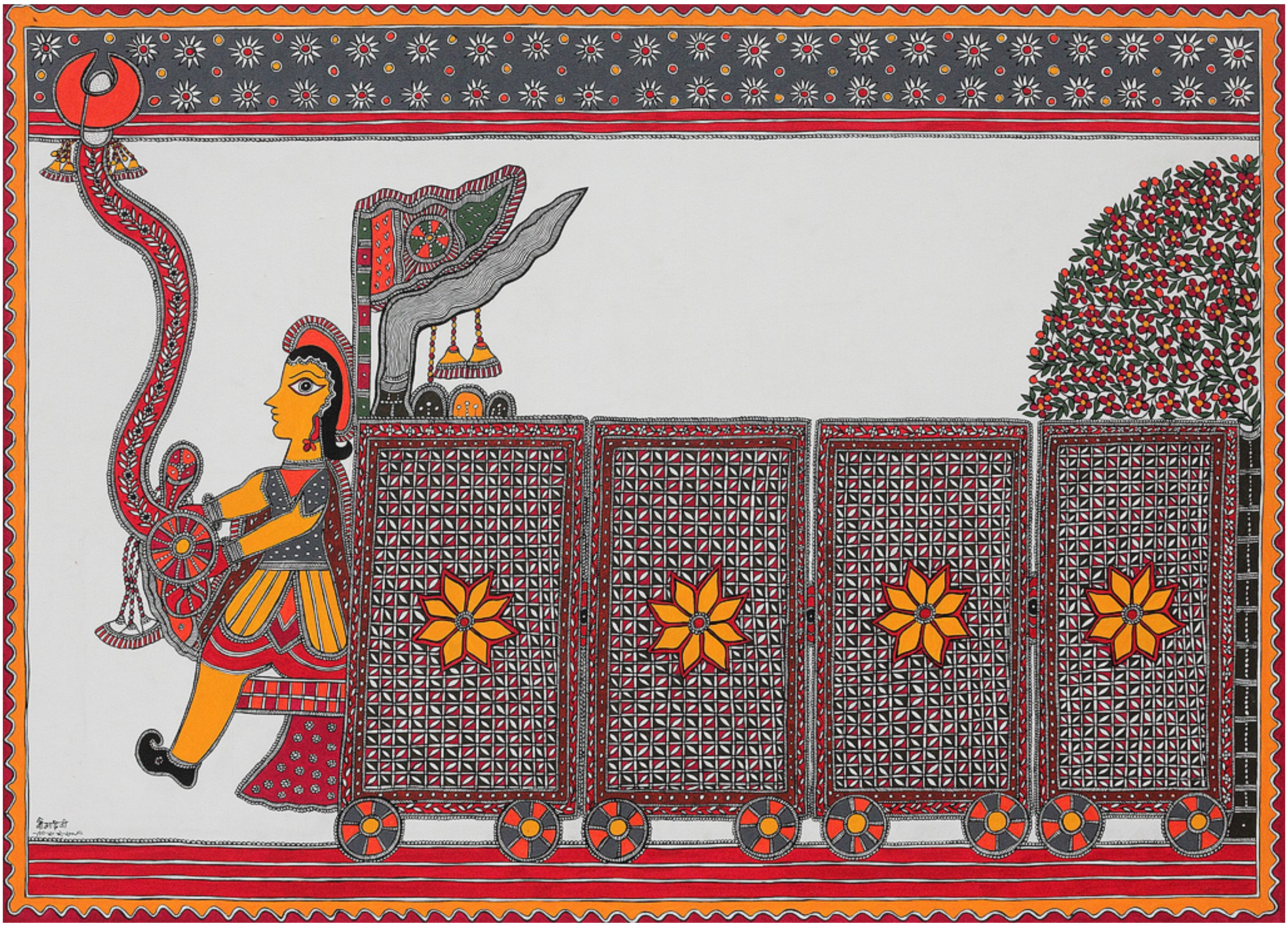

ट्रेन, 2009, बऊवा देवी

ग़ौरतलब है कि ऑस्ट्रेलिया में यूरोपीय लोगों के बसने के बाद लगभग 100 आदिवासी भाषाएँ लुप्त हो गईं। वैश्विक व्यापार में प्रयुक्त भाषाएँ अधिकाधिक प्रभावशाली होती जा रही हैं। इसका अर्थ यह है कि जैसे-जैसे तकनीक दुनिया भर में व्यापक होती जा रही है, डिजिटल समर्थन के बिना भाषाएँ संकटग्रस्त होती जा रही हैं। इसके पीछे कारण यह हो सकता है कि स्क्रिप्ट लिखने के लिए वर्ड प्रोसेसिंग उपकरण उपलब्ध न हों; हो सकता है कि सॉफ़्टवेयर और वेबसाइटें उस भाषा में उपलब्ध न हों।

डिजिटलीकरण की इस कमी का व्यापक प्रभाव पड़ रहा है। लगभग 97% वैश्विक भाषाएँ डिजिटल रूप से वंचित हैं, केवल 3% ही डिजिटल परिदृश्य पर हावी हैं। चूँकि ये भाषाएँ इतनी प्रभावशाली हैं, इसलिए इनमें अधिक संसाधन निवेश किए जाते हैं। परिणामस्वरूप अन्य भाषाओं के अधिक से अधिक मूल वक्ता इन भाषाओं को सीखते हैं क्योंकि ऐसा करने से उन्हें नौकरी, शिक्षा और अन्य अवसरों तक बेहतर पहुँच मिलती है।

इसका सबसे ताज़ा उदाहरण आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से जुड़े सभी मामलों में अंग्रेजी भाषा का प्रभुत्व है, क्योंकि इसके डेटा का उपयोग करके अंग्रेजी भाषी देशों में एआई को प्रशिक्षित किया जा रहा है। क्या इससे अन्य भाषाओं का पतन तेज़ हो सकता है? फिलहाल इस बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। पर इस तरह की आशंका तो है। बहरहाल भाषाओं को बचाने के लिए कोई बड़ा प्रयास दिख नहीं रहा। लेकिन यह ज़रूर कहा जा रहा है कि जैव विविधता भी बचनी चाहिए। अगर हम वाक़ई जैव विविधता को सुरक्षित रखना चाहते हैं, तो भाषाओं के संरक्षण पर भी ध्यान देना होगा। विविधता में ही सृष्टि का सौंदर्य निहित है। भाषाई एकरूपता की बात करना उस विविधता को नष्ट करना है। इसलिए भाषाओं को बचाने के प्रयास ज़रूरी हैं।